Research Paper E-ISSN NO : 2455-295X | VOLUME : 6 | ISSUE : 11 | NOVEMBER 2020

चैतन्य महाप्रभु की भारतीय भक्ति आंदोलन के इतिहास में भूमिका : एक आलोचन

डॉ. संतोष कुमारी [1]

[1] एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास, राजकीय महाविद्यालय, बावड़ी (जोधपुर)

ABSTRACT:

महाप्रभु चैतन्य देव की जीवन लीला का अधिकांश स्वरूप वृंदावन कृत 'चैतन्य भागवत', कृष्णदास कविराज कृत "चैतन्य चरितामृत", कवीकर्णपुर कृत "चैतन्य चरितामृत" और" चैतन्य चंद्रोदय" में प्रामाणिक रूप से वर्णित है उनके जीवन लीला के अक्षर सूत्र राम भक्त मुरारी गुप्त और गोविंद दास की कृतियों में भी देखने को मिलते हैं। लोचनदास और दयानंद कृत चैतन्य मंगल नामक ग्रन्थों में विस्तार पूर्वक चैतन्य महाप्रभु का जीवन वृत प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त अनेक बांग्ला ग्रन्थों में भी चैतन्य महाप्रभु के चारित्रिक विषयक आख्यान प्राप्त होते हैं। षड्गोस्वामीगण, सार्वभौम भट्टाचार्य तथा प्रबोधानन्द सरस्वती कृत स्रोतों एवं अन्य रचनाओं में स्तुत्यात्मक अंशों से भी उनकी जीवनचर्या और व्यक्तित्व के दिग्दर्शन होते हैं। इन सभी के द्वारा वर्णित चरित्रों में चैतन्य महाप्रभु की भूमिका भक्ति आंदोलन के रूप में विशिष्ट रूप से दिखाई देती है। चैतन्य महाप्रभु के अनेक प्रकार के अनुयाई थे जिन्होंने उनके उपदेशों को नियमों को व्यवहार को समाज के समक्ष प्रस्तुत किया।

दीर्घायु की आकांक्षा अथवा प्रेम के कारण निमाई नाम से जाने गए चैतन्य प्रभु निमाई पंडित के रूप में प्रसिद्ध रहे और बाद में सन्यास आश्रम में इनका नाम कृष्ण चैतन्य हुआ लेकिन उसके पश्चात में यह चैतन्य महाप्रभु के नाम से प्रसिद्ध को प्राप्त हुए। चैतन्य महाप्रभु पीड़ित मानवता के अश्रुत पूर्व दिव्य त्राणकर्ता थे। उनके अनुयायी वैष्णवों ने उनके दृष्टिकोण को शास्त्र सम्मत एवं सुनियोजित रूप में प्रस्तुत किया। उसके द्वारा नवीन साधना पद्धति, नवीन साहित्य और नवीन संस्कृति का मांगलिक अभिषेक हुआ। भारत के धार्मिक भक्ति आंदोलन के इतिहास में उनका स्थान और योगदान अभूतपूर्व है।

KEYWORDS:

चैतन्य महाप्रभु, भारतीय, भक्ति आंदोलन, इतिहास, भूमिका, आलोचन।

आलेख प्रस्तुति

यद्यपि भक्ति का मूल आधार इस देश में इस्लाम जन्म के सदियों पूर्व से ही विद्यमान था, पर हिंदू समाज उस समय दिशाहीन हो गया था। उसे एक ऐसे नायक की आवश्यकता थी जो उसे सही रास्ता दिखा सके। सामान्य व्यक्ति आमतौर पर कायर तो नहीं होता लेकिन सुविचारक भी नहीं होता। इसलिए नैतिकता के क्षेत्र में स्वयं पहल करके आगे बढ़ने का हौसला प्रत्येक मानव में नहीं दिखाई देता। फिर भी वह यह आवश्यक चाहता है कि, उसे ऐसा करने की प्रेरणा मिलती रहे। जिसकी आकांक्षा में वह किसी न किसी अवलंब को ढूंढने का प्रयास करता है और उसकी प्रतीक्षा में लगा रहता है। यह अवलंब ईश्वर की भक्ति ही है जिसकी प्राप्ति कर मनुष्य समस्त दुखों से छुटकारा प्राप्त कर लेता है और अपने जीवन में मोक्ष मार्ग की ओर अग्रसर होता है।

प्राचीन भारतीय हिंदू दर्शन के अनुसार भक्ति अथवा जीवन मरण के बंधन से छुटकारा प्राप्त करना ही जीवन का अंतिम लक्ष्य है। मुक्ति प्राप्त करने के तीन मार्ग हैं- ज्ञान, कर्म और भक्ति। दिल्ली के सुल्तानों का काल 1206 ई० से 1526 बड़े के मध्य रहा है, जिसमें कई हिंदू संतों एवं समाज सुधारकों ने धर्म सुधार आंदोलन का सूत्रपात किया। यह आंदोलन भक्ति पर जोर देता था। इसलिए इसे भक्ति आंदोलन कहा जाने लगा। भक्ति आंदोलन का इतिहास महान धर्म सुधारक शंकराचार्य के काल से शुरू होता है, जिन्होंने बौद्ध धर्म का सफलतापूर्वक सामना कर हिंदू धर्म को एक ठोस धार्मिक भूमि प्रदान की थी। लेकिन शंकराचार्य की ज्ञान मार्ग व्यवस्था बहुत ही दार्शनिक और बौद्धिक थी। अतः वह जनसाधारण को अपने प्रभाव में न ला सके। तदुपरांत मध्य युगीन धर्मशास्त्रियों ने जनसाधारण को हिंदू धर्म की ओर आकर्षित करने के लिए एवं उसे लोकजीवन में जीवित तथा सक्रिय बना देने के लिए तृतीय मार्ग पर अर्थात् अपने ईष्ट देव की भक्ति पर अधिक जोर दिया।

बंगाल के नदिया नामक स्थान पर एक ब्राह्मण परिवार में जन्म लेने वाले, तथा 22 वर्ष की आयु में आधुनिक गया में ईश्वरपुरी नमक साधु द्वारा कृष्ण मंत्र प्राप्त कर, 24 वर्ष की आयु में साधु होने वाले, प्रारंभिक दिनों में विशंभर नाम से परिचित तदुपरांत चैतन्य नाम से विख्यात, चैतन्य महाप्रभु भक्ति आंदोलन के महानतम प्रतिपादक ही नहीं वरन् महानतम संत के रूप में पृथ्वी पर अवतरित हुए।

उनका ईश्वर प्रेम अद्भुत था। वे कृष्ण का नाम लेते हुए हंसते थे, कृष्ण का नाम लेकर रोते थे, उन्हीं के नाम का रटन करते हुए नाचते थे और अक्सर मूर्छित हो जाते थे। उन्होंने भक्ति में कीर्तन को मुख्य स्थान दिया था। चैतन्य की यह भक्ति भारतीय इतिहास का चरमरूप प्राप्त कर चुकी थी। चैतन्य महाप्रभु की भक्ति का यह रूप भारतीय इतिहास में अद्भुत स्थान को ग्रहण करने वाला हुआ। चैतन्य ने परमात्मा पर पूर्ण आस्था रखने का उपदेश दिया। वे अपने परमात्मा को कृष्ण तथा हरी कहते थे। चैतन्य धर्म, रस्मों एवं आडंबरों से रहित थे। उनकी उपासना का स्वरूप ऐसा प्रेम, भक्ति, कीर्तन और नृत्य था जिसमें भक्त इतना भावातुर हो जाता है कि प्रेमावश में परमात्मा से साक्षात्कार कर लेता है। चैतन्य के उपदेशों का सार था, यदि कोई जीव कृष्ण पर श्रद्धा रखता है, अपने गुरु की सेवा करता है तो मायाजाल से मुक्त होकर कृष्ण को प्राप्त होता है। उसकी भक्ति उसे सांसारिक बंधनों से ऊपर ले जाती है। वह मानते थे कि, श्रद्धा और भक्ति, कीर्तन और नृत्य के द्वारा ऐसी भावमयी स्थिति उत्पन्न की जा सकती है जिससे परमात्मा का साक्षात्कार प्राप्त हो सकता है। उन्होंने आंतरिक और आध्यात्मिक रूप से ऐसे साक्षात्कार पर जोर दिया और बिना जाति धर्म का भेदभाव किए सभी को उपदेश दिया। उनका प्रभाव कितना गहरा और स्थाई था कि, उनके अनुयायी उन्हें कृष्ण का अवतार मानने लगे थे।

श्री चैतन्य तत्कालीन पराधीन समाज के लिए एक ऐसी ही प्रेरक शक्ति के रूप में अवतरित हुए। चैतन्य के पूर्व बंगाल में वैष्णवधर्मावलंबी व्याप्त थे, लेकिन उनकी स्थिति अत्यधिक भयावह थी। वैष्णव धर्म के प्रति समाज से रुचि लुप्त होने लगी थी। क्योंकि तांत्रिक एवं शाक्त पद्धति उसका स्थान ले रही थी। दिन-रात जगत मिथ्या जैसे वाक्य को सुनकर लोग ऊब गए थे। उसके अलावा वैष्णव विरोधियों की संख्या भी निरंतर समाज में फैलने लगी थी, जो निरंतर वैष्णवों से द्रोह किया करते थे। इससे भी बड़ी बात यह थी कि उस समय बंगाल पर मुसलमानों का राज्य व्याप्त था। हिंदू समाज को अपना धर्म बचा पाना मुश्किल हो रहा था। व्यवहार ने परमार्थ का स्थान ले लिया था। यद्यपि विशुद्ध वैष्णव धर्म का नामोनिशान अभी तक बाकी था, फिर भी वैष्णव धर्म साधारण और शिक्षित सभी लोगों के लिए उपहास का विषय हो गया था। ऐसे समय में इस्लाम के आतंक से जड़ीभूत समाज को श्री चैतन्य ने नव चेतना प्रदान की। श्री चैतन्य अपने देश काल की आस्था का प्रतीक होकर अवतरित हुए। उनका हरि घट घट व्याप्त था। वह फिर अपने हरि को भला क्यों पीड़ाकुल करके छोड़ सकते थे। इसलिए नित्यानंद को पाने के बाद उन्होंने अपने कीर्तन को जन आंदोलन का रूप दे

दिया। हरि बोल, हरि बोल से गलियां गूंज उठीं। लोगों को लगा कि हां हम में भी साहस है। हम अपनी आस्था को घोषित करके उस पर सादर और सानंद टिके रह सकते हैं। बड़े लोगों में चैतन्य की कृपा से अब फिर से चेतना लौट आई थी। ज्ञान के जो शब्द अब तक निरर्थक प्रतीत होते थे, पंडितों के मन में फिर से सार्थक होने लगे थे। पूरे समाज में हलचल उत्पन्न हो गई। ऐसा लगा जैसे मुर्दों में जान आ गई हो।

चैतन्य भक्ति आंदोलन का ऐतिहासिक प्रखर सूर्य अनेक क्षेत्रों में प्रकाशित होने लगा। इसका प्रभाव परोक्ष रूप से संपूर्ण भारत पर, प्रत्यक्ष रूप से उत्तरी भारत के सामाजिक एवं धार्मिक जीवन पर दृष्टिगोचर होने लगा। सम्राट हर्षवर्धन के बाद उत्तरी भारत में बौद्ध धर्म का ह्रास होने लगा था और चैतन्य काल तक आते-आते उसका पूरा उन्मूलन हो गया था। बौद्ध धर्म के विनाश के सबसे प्रबल कारण श्री शंकराचार्य के द्वारा चलाए वैदिक धर्म का पुनरुत्थान आंदोलन ही था। इस प्रकार जब ह्रासोन्मुख बौद्ध धर्म जनता का पथ प्रदर्शक बनने की शक्ति को खो बैठा, तब उत्तरापथ में नाथ संप्रदाय, शाक्त मत जैसे शैव मत के विभेदों का प्राबल्य बढ़ने लगा। इन मतों की साधना से जितना लाभ हुआ उतना नुकसान भी हुआ। इससे चारित्रिक पवित्रता तथा नैतिक मूल्यों का महत्व अवश्य बढ़ा लेकिन शुष्क साधनाओं करामातों द्वारा जनता की आध्यात्मिक प्यास नहीं बुझ पाई। शंकराचार्य के तर्क प्रधान अद्वैतवाद में वह संजीवनी नहीं थी जिसे साधारण जनता का अबोध चित्त सहारा पाकर उठ सके और आत्म साक्षात्कार कर लेने में समर्थ हो सके। ऐसे समय में सौभाग्यवश प्राचीन भागवत धर्म का फिर से उदय हुआ और वह धार्मिक आंदोलन फिर से उठ खड़ा हुआ जिसे इतिहास में वैष्णव आंदोलन कहा गया है।

समस्त उत्तर भारत तथा खासकर बंगाल पर चैतन्य आंदोलन का यह प्रभाव सुदृढ़ रूप से कृष्ण भक्ति आंदोलन था। डॉ० तपन राय चौधरी के शब्दों में "चैतन्यवाद को सभी परिपेक्ष्य में देखने पर ऐसा प्रतीत होता है कि, यह शुद्ध बुद्धिवादी व्यवस्था और ज्ञान के अतुष्टि कर मार्ग के विरुद्ध भावनात्मक और सादगी का विद्रोह था। यह सुधारवादी आंदोलन तंत्रवाद का विरोधी था। मध्ययुगीन भारत में जब चैतन्य मत ने बंगाली समाज के स्वरूप निर्माण में सशक्त भूमिका अदा की तो भक्ति आंदोलन में ऐसे तत्वों का महत्व स्पष्ट हो गया। इस प्रकार चैतन्य महाप्रभु के भक्ति आंदोलन का उद्देश्य समस्त उत्तर भारत के सामाजिक, राजनीतिक एवं धार्मिक जीवन में एक नवीन जागरण को जन्म देना था।

इस प्रकार श्री चैतन्य ने ईश्वर को कर्मकांड की जटिलताओं से मुक्त करके जन-जन के लिए सुलभ बना दिया था और शासक वर्ग की धमकियों से लोक आस्था को मुक्त कर दिया था। उन्होंने लोगों से कहा नाचो गाओ, नाम कीर्तन में मस्त रहो, ईश्वर मूर्तियों में मिले तो वाह वाह! वरना वह तुम्हारे मन में, वचन और कर्म में सदा तुम्हारे साथ हैं। उनके नाम पर निर्भय जियो। आतंक से जड़ीभूत जन जीवन को श्री चैतन्य फिर से नव चेतना प्रदान की।

वह एक समाज सुधारक थे अतः उन्होंने तत्कालीन सामाजिक कुप्रथाओं पर ध्यान न देते हुए धार्मिक मामलों में सभी जातियों की समानता पर जोर दिया। चैतन्य के उपदेश एवं विचारधारा केवल बंगाली एवं उड़ीसा में ही नहीं वरन देश के अन्य भागों में भी जनप्रिय हो उठे थे। उन्होंने जो उपदेश दिए संदेश दिए वह समाज में आध्यात्मिक औषधि के समान जन सामान्य को संघर्ष रूपी रोग से मुक्त करने वाले सिद्ध हुए। उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि, मानव हृदय राजनीतिक, सामाजिक, विषमताओं के बीच भी आनंद और आह्लाद से नाच सकता है।

चैतन्य की मृत्यु के उपरांत उनके उपदेशों के साथी उनके प्रभावशाली व्यक्तित्व के समन्वय से चैतन्य विचारधारा से युक्त चैतन्य संप्रदाय का रूप धारण करने वाले हुए तथा भक्ति आंदोलन के एक ठोस रूप के स्रोत रूप में अवतरित हुए। शीघ्र ही नदिया या नवदीप का यह गौरांग महाप्रभु कृष्ण के प्रतीक स्वरूप समझा जाने लगा।

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि इस संप्रदाय के साधकों ने बिना किसी भेद दृष्टि के भारतवर्ष के सभी क्षेत्रों से आकर भक्ति आंदोलन को बल प्रदान किया। इसके भाव और भाषा से उन्होंने हिंदी साहित्य के भंडार को भर दिया। जिसने हिंदी साहित्य को अभिनव श्री और शोभा प्रदान की। इस रस साधना धारा के विभिन्न सोपानों का जो रसात्मक स्फुरण हुआ वह इस संप्रदाय का भारतवर्ष को महत्वपूर्ण योगदान है। कृष्ण भक्ति धारा से संबद्ध अन्य संप्रदायों के सादृश्य में यह संप्रदाय भी अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है। आज भी इस रस साधना का भारतवर्षीय समाज में विशिष्ट स्थान है। चैतन्य संप्रदाय का अनुशीलन परिशीलन करने से ज्ञात होता है कि, चैतन्य महाप्रभु के अभाव में अन्य भागवत संप्रदायों का अध्ययन अधूरा ही रह जाएगा। ब्रज तथा ब्रजेतर प्रदेशों की, राधा कृष्ण भक्ति में मधुर भाव का सन्निवेश यदि किसी के द्वारा किया गया है तो वह चैतन्य संप्रदाय है। इसके संपर्क में आते ही विभिन्न रस चिंतन साहित्य के अंदर निहित होता चले गये। दार्शनिक चिंतन, भौतिक रस सिद्धांत उपस्थापन, प्रकृष्ट अचार विधान, सरस साहित्य सृजन, लोकनाट्य, रासलीला, अनुकरण, ब्रज यात्रा, उपासना विधि और शास्त्रीय संगीत तथा सभी क्षेत्रों में इस संप्रदाय का अपूर्व, चिरंतन ऐतिहासिक योगदान है।

REFERENCES

1. श्री चैतन्य चरितामृत – प्रणेता छविराज कृष्णदास गोस्वामी, साधना प्रकाशनी, कलकत्ता।

2. चैतन्य भागवत – श्री वृन्दावन दास ठाकुर, प्रकाशक- साधना प्रकाशनी, कलकत्ता।

3. चितन्य चन्द्रोदय नाटक – महाकवि श्री कर्णपूर, प्रकाशक – श्री गौरांग मन्दिर, कलकत्ता।

4. चैतन्य शतक- श्री सार्वभौम भट्टाचार्य।

5. चैतन्याष्टक- महाप्रभु चैतन्य।

6. वृन्दावन दास – चैतन्य भागवत, श्री राधा गोविन्द नाथ द्वारा सम्पादित, निताई करुणा कल्लोलिनी टीका सहित

7. जयानन्द – चैतन्य मंगल

8. चैतन्य चन्द्रामृतम् – प्रबोधानन्द सरस्वती।

9. राय चौधरी- एरली हिस्ट्री ऑफ़ वैष्णवा सेक्ट।

10. एस०के०डे० - एरली हिस्ट्री ऑफ़ द वैष्णवा फेथ एंड मूवमेंट इन बंगाल।

11. एस०सी० मुखर्जी - ए स्टडी ऑफ़ वैष्णविज्म इन एनसिएंट एंड मेडाइवल बंगाल।